जय माता की

मन्सा देवी महात्म्

कथा इतिहास

(सबकी मनोकामना पूर्ण करने वाली)

श्री मनसा देवी

महात्म्

महात्म्, कथा एवं इतिहास

- मनसा देवी की आरती
- मनसा देवी की कथा
- मनसा देवी का इतिहास
- मनसा देवी का महात्म्
- मनसा देवी के बारह नाम
- मनसा देवी की जप विधि
- मनसा देवी की पूजन सामग्री
- नौ देवियों प्रसिद्ध मन्दिर
- १०८ सिद्ध पीठ
- मनसा देवी की पुष्पांजलि

सहित

संग्रहकर्ता : भवानी प्रसाद

मूल्य 10. रुपये

प्रकाशक :
बी0एस0 प्रमिन्दर प्रकाशन
दिल्ली 5।

मुख्य वितरक :
कर्मसिंह अमरसिंह पुस्तक विक्रेता
बड़ा बाजार हरिद्वार-249401

अनुक्रमणिका

मनसा देवी की आरती

जय मनसा माता, श्री जय मनसा माता।
जो नर तुमको ध्याता, जो नर मैया जी को ध्याता।
मन वांछित फल पाता, जय मनसा माता।
जरत्कारू मुनी पत्नी, वासुकि तुम भगिनी।।
मैया तुम वासुकि भगिनी।
कश्यप की तुम कन्या आस्तीक की माता।। जय..
सुरनर मुनिगण ध्यावत, सेवत नर नारी।
मैया सेवत नर नारी।।
गर्वधन्वन्तरी नाशिनी, हंस वाहिनी देवी।
जय नागेश्वरी माता, जय मनसा माता।।
पर्वत वासिनी संकट नाशिनी,
अक्षय धनदात्री मैया, अक्षय धनदात्री।
पुत्र पौत्र वायिनी माता, पुत्र पौत्र दायिनी माता।
मन इच्छा फल दाता, जय मनसा माता।।
मनसा जी की आरती जो कोई नर गाता,
मैया जो निस दिन गाता।
कहत शिवानन्द स्वामी रटत हरीहर स्वामी।
सुख सम्पत्ति पाता।। जय मनसा माता। जय..

कर्पूर गौरं करुणावतारं संसार सारं भुजगेन्द्र हारम्।
सदा वसन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानी सहितं नमामि।।
मनसा दैव्यै नमः कर्पूर नीराजनम् समर्पयामि।
नीराजनान्ते आचमनीयम् जलं समर्पयामि।।

॥ आरती॥

ॐ जय मनसा देवी, मैय्या जय मनसा देवी।
तुमको निशदिन ध्यावत, सुर मुनि ऋषि गण री॥१॥
कनक समान कलेवर, रक्ताम्बर धारी मैय्या रक्ताम्बर धारी।
नाग पुष्प गल माला-२, चूड़ामणि धारिणि मैय्या०।
तुमको सब जन ध्यावत जय मंगल करणी।
नाग वाहन मैय्या राजत, हंस वारन द्व साजत०।
सुर नर मुनि जन सेवत, तिनके दुःख नासीं मैय्या०॥३॥
नागकुंण्डल श्रुति शोमित नासाग्रे मोती मैय्या०॥४॥
तुम ही जग की माता, सुत धन जन दात्री मैय्या सु०।
भक्तन की दुःख हर्त्ता सुख सम्पत्ति सब कर्त्ता ॐ जय०॥५॥
चार भुजा अहि शोभित मद हास्यं धारी मैय्या०।
जो जांचत सो पावत सेवत नर नारी मैय्या सेवत०॥६॥
कंचन थाल विराजत कपूरं तगर बाती मै०।
जयन्तीपुर में राजत, पुष्कर राज में राजत, कोटि वज्र ज्योति॥७॥
शंकर गारूड़ि दर्प विनाशिनी गरूड़कार करती मै०।
हरिहर ब्रह्मा पूजित, जग निर्भय करती मैय्या०॥८॥
इन्द नाग त्राण करतीं सब सम्पद दात्री मै० विषहरी सिद्धश्वरी।
जगगौरी, मुनिघरनी जगजननी मैय्या जय मनसा देवी॥९॥
शम्भुसुता की आरती जो कोई नर गावे
कहत निजानन्द स्वामी कहत जपत हरीकर यामी।
मन वांछित फल पावे।
जय मंशापूरणी मैय्या जय ईच्छा पूरणी।
मान ज्ञान की दात्री, त्राण ध्यान जयदात्री जय मनसा देवी॥

श्री मनसा देवी कथा

एक समय जनमेजय का सर्प यज्ञ हो रहा था, तब ब्रह्मा जी ने देवताओं से कहा- जगत् में सर्प बहुत बढ़ गए हैं, अतः अब जरत्कारू नाम के एक ऋषि होंगे, जरत्कारू ऋषि की पत्नी का नाम भी जरत्कारू ही होगा, वह सर्पराज वासुकि की बहिन होगी, उसके गर्भ से आस्तीक का जन्म होगा और वही सर्पों को मुक्त करेगा। तब एलापत्र नाम के एक नाग ने सर्पराज से कहा-हे वासुके ! ठीक है, मेरे विचार से भी आपकी बहिन जरत्कारू का विवाह उस जरत्कारू ऋषि से ही होना चाहिए। वे जिस समय भिक्षा के समान पत्नी की याचना करें, उसी समय आप उन्हें अपनी बहिन दे दें।

इस बात के थोड़े दिनों बाद ही समुद्र-मन्थन हुआ, जिसमें वासुकि नाग को मथने वाली रस्सी बनाई गई। इसलिए देवताओं ने वासुकि नाग को ब्रह्मा जी के पास ले जाकर फिर से वही बात कहलावा दी जो एलापत्र नाग ने कही थी। वासुकि ने सर्पों को जरत्कारू ऋषि की खोज में नियुक्त कर दिया और उससे कह दिया कि जिस समय जरत्कारू ऋषि विवाह करना चाहें उसी समय आकर मुझे सूचित करना।

महाभारत के आदि पर्व की कथा के अनुसार जरत्कारू ऋषि की पत्नी जरत्कारू ही बाद में 'मनसा देवी' के नाम से विख्यात हुई। कथा के अनुसार ऋषि जरत्कारू ने प्रयत्न किया था कि मुझे मेरे नाम वाली कन्या मिल जाएगी और वो भी भिक्षा की तरह, जिसके भरण-पोषण का भार मेरे ऊपर न रहे तो मैं अपनी पत्नी रूप में स्वीकार कर उससे विवाह करूंगा तथा पितरों, देवताओं की इच्छा (मनसा) पूरी करने और स्वयं ऋषि की प्रतिज्ञा को पूरा करने के लिए वासुकि नाग की बहिन जरत्कारू का नाम सबकी मनसा पूरी करने के कारण 'मनसा देवी' विख्यात हुआ।

जरत्कारू ऋषि कौन थे ?

शौनक ऋषि ने पूछा- हे सूतनन्दन ! आपने जिस जरत्कारू ऋषि के बारे में कहा है, उसका जरत्कारू ये नाम क्यों पड़ा था। उसके नाम का अर्थ क्या है और उनसे आस्तीक का जन्म कैसे हुआ?

'जरा' शब्द का अर्थ है क्षय, 'कारू' शब्द का अर्थ है दारुण। तात्पर्य ये है कि उनका शरीर पहले बड़ा दारुण अर्थात् हट्टा-कट्टा था। बाद में उन्होंने तपस्या करके उसे क्षीण बना लिया, इसी से उसका नाम 'जरत्कारू' पड़ा। वासुकि नाग की बहिन भी पहले वैसे

ही थी, उसने भी अपने शरीर को तपस्या के द्वारा क्षीण कर लिया, इसलिए वह भी जरत्कारू कहलाई।

राजा परीक्षित का राज्यकाल था। तब जरत्कारू ऋषि बहुत दिनों तक ब्रह्मचर्य धारण करके तपस्या में संलग्न रहे। वे जप, तप और स्वाध्याय में लगे रहते तथा निर्भय होकर स्वच्छन्द रूप से पृथ्वी पर घूमते थे। मुनिवर का नियम था कि जहाँ सन्ध्या हो जाती वहीं ठहर जाते थे। वे पवित्र तीर्थों में जाकर स्नान करते और ऐसे कठोर नियमों का पालन करते जिनका पालन सामान्य व्यक्ति के लिए असंभव था। वे केवल वायु पीकर निराहार रहते। इस प्रकार उनका शरीर तृणवत सूख गया था। एक दिन यात्रा करते समय उन्होंने देखा कि कुछ पितर नीचे की ओर मुंह किए एक गड्ढे में लटक रहे हैं। वे एक खस का तिनका पकड़े हुए थे और वही केवल बच भी रहा था। उस तिनके की जड़ को भी धीरे-धीरे एक चूहा कुतर रहा था। पितृगण निराहार थे, दुबले और दुखी थे। जरत्कारू ने उनके पास जाकर पूछा-आप लोग जिस घास के तिनके का सहारा लेकर लटक रहे हैं, उसे एक चूहा कुतरता जा रहा है। आप लोग कौन है? जब इस खस की जड़ कट जाएगी, तब आप लोग नीचे की ओर मुंह किये गड्ढे में गिर जायेंगे, आप लोगों को इस अवस्था में देखकर मुझे बड़ा दुख हो रहा है। मैं आपकी

क्या सेवा करूँ ? आप लोग मेरी तपस्या के चौथे, तीसरे अथवा आधे भाग से इस विपत्ति से बचाये जा सके तो बतलावे और तो क्या, मैं अपनी सारी तपस्या का फल देकर भी आप लोगों को बचाना चाहता हूँ। आप आज्ञा कीजिये।

पितरों ने कहा- 'आप बूढ़े ब्रह्मचारी हैं, हमारी रक्षा करना चाहते हैं, परन्तु हमारी विपत्ति केवल तपस्या से नहीं टल सकती। तपस्या का फल तो हमारे पास भी है। परन्तु वंश परम्परा के नाश के कारण हम इस घोर नरक में गिर रहे है।' आप वृद्ध होकर करुणावश हमारे लिए चिंतित हो रहे हैं, इसलिए हमारी बात सुनिये। हम लोग यायानर नाम के ऋषि हैं। वंश परम्परा क्षीण हो जाने से हम पुण्य लोकों से नीचे गिर गए हैं। हमारे वंश में अब केवल एक ही व्यक्ति रह गया है, वह भी नहीं के बराबर है। हमारे अभाग्य से वह तपस्वी हो गया है, उसका नाम जरत्कारू है। वह वेद-वेदांगों का विद्वान् तो है ही, संयमी, उदार और व्रतशील भी है। उसने तपस्या के लोभ से हमें संकट में डाल दिया है। उसके कोई भाई-बन्धु अथवा पत्नी, पुत्र नहीं है। इसी से हम लोग बेहोश होकर अनाथ की तरह गड्ढे में लटक रहे हैं। यदि वह आपको कहीं मिले तो उससे इस प्रकार कहना- जरत्कारू! तुम्हारे पितर नीचे मुंह करके गड्ढे में लटक रहे हैं। तुम विवाह करके सन्तान उत्पन्न करो। अब हमारे

वंश के तुम्हीं एक आश्रय हो। ब्रह्मचारी जी ! यह जो आप खस की जड़ देख रहे हैं, यही हमारे वंश का सहारा है। हमारी वंश परम्परा के जो लोग नष्ट हो चुके हैं, वही इसकी कटी हुई जड़ें हैं। यह अधकटी जड़ ही जरत्कारू है। जड़ कुतरने वाला चूहा महाबली काल है। यह एक दिन जरत्कारू को भी नष्ट कर देगा, तब हम लोग और भी विपत्ति में पड़ जायेंगे। आप जो कुछ देख रहे हैं, वह सब जरत्कारू से कहिएगा। कृपा करके यह बतलाइये कि आप कौन हैं और हमारे बन्धु की तरह हमारे लिए क्यों शोक कर रहे हैं।

पितरों की बात सुनकर जरत्कारू को बड़ा दुःख हुआ। उनका गला रुंध गया, उन्होंने गद्गद् वाणी से अपने पितरों से कहा–आप लोग मेरे ही पिता और पितामह हैं। मैं आप लोगों का अपराधी पुत्र जरत्कारू हूँ। आप लोग मुझ अपराधी को दण्ड दीजिए और कर्म करने योग्य काम बतलाइये। पितरों ने कहा– बड़े सौभाग्य की बात है कि तुम संयोगवश यहाँ आ गए। भला बताओ तो तुमने अब तक विवाह क्यों नहीं किया? जरत्कारू ने कहा– पितृगण मेरे हृदय में यह बात घूमती थी कि मैं अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन करके स्वर्ग प्राप्त करूँ। मैंने अपने मन में यह दृढ़ संकल्प कर लिया था कि मैं कभी विवाह नहीं

करूँगा। परन्तु आप लोगों को उल्टे लटकते देखकर मैंने

अपना ब्रह्मचर्य का निश्चय पलट दिया। अब मैं आप लोगों के लिए निःसंदेह विवाह करूँगा। यदि मुझे मेरे ही नाम की कन्या मिल जाएगी और वह भी भिक्षा की तरह तो मैं उसे पत्नी स्वीकार कर लूंगा, परन्तु उसके भरण पोषण का भार नहीं उठाऊंगा। ऐसी सुविधा मिलने पर ही मैं विवाह करूंगा अन्यथा नहीं। आप लोग चिन्ता मत कीजिए, आपके कल्याण के लिए मुझसे पुत्र होगा और आप परलोक में सुख से रहेंगे।

जरत्कारू अपने पितरों से इस प्रकार कहकर पृथ्वी पर विचरने लगे। परन्तु एक तो उन्हें बूढ़ा समझकर कोई उनसे अपनी कन्या ब्याहना नहीं चाहता था और दूसरे उसके अनुरूप कन्या मिलती भी नहीं थी। वे निराश होंकर वन में गये और पितरों के हित के लिए तीन बार धीरे-धीरे बोले मैं कन्या की याचना करता हूँ। यहाँ जो भी चर-अचर अथवा गुप्त या प्रकट प्राणी हैं, वे मेरी बात सुनें। मैं पितरों का दुःख मिटाने के लिए उनकी प्रेरणा से कन्या की भीख मांग रहा हूँ। जिस कन्या का नाम मेरा ही हो, जो भिक्षा की तरह मुझे दी जाए और जिसके भरण-पोषण का भार मुझ पर न रहे, ऐसी कन्या मुझे प्रदान करो। वासुकि नाग के द्वारा नियुक्त सर्प जरत्कारू की बात सुनकर नागराज के पास गये और

उन्होंने झटपट अपनी बहिन लाकर भिक्षा रूप में जरत्कारू

ऋषि को समर्पित की। जरत्कारू ऋषि ने उसके नाम और भरण की बात जाने बिना अपनी प्रतिज्ञा के विपरीत उसे स्वीकार नहीं किया और वासुकि से पूछा कि 'इसका नाम क्या है? और साथ ही यह भी कहा कि मैं इसका भरण पोषण नहीं करूँगा।'

वासुकि नाग ने कहा- 'इस तपस्विनी कन्या का नाम भी जरत्कारू है और यह मेरी बहिन है। मैं इसका भरण पोषण और रक्षण करूँगा। आपके लिए मैंने ही इसे अब तक रख छोड़ा है। जरत्कारू ऋषि ने कहा- मैं इसका भरण-पोषण नहीं करूँगा, यह कभी मेरा अप्रिय कार्य न करे। करेगी तो मैं इसे अवश्य छोड़ दूंगा। जब नागराज वासुकि ने उसकी शर्त स्वीकार कर ली, तब वे उनके घर गये। वहाँ विधिपूर्वक विवाह-संस्कार हुआ। जरत्कारू ऋषि अपनी पत्नी जरत्कारू के साथ वासुकि नाग के श्रेष्ठ भवन में रहने लगे। उन्होंने अपनी पत्नी को भी अपनी शर्त की सूचना दे दी कि 'मेरी रूचि के विरुद्ध न तो कुछ करना और न कहना। वैसा करोगी तो मैं तुम्हें छोड़कर चला जाऊँगा।' उनकी पत्नी ने स्वीकार किया और वह सावधान रहकर उनकी सेवा करने लगी। समय पर उसे गर्भ रह गया और धीरे-धीरे बढ़ने लगा।

एक दिन की बात है कि जरत्कारू ऋषि कुछ खिन्न

से होकर अपनी पत्नी की गोद में सिर रखकर सोए हुए

थे, वे सो ही रहे थे कि सूर्यास्त का समय हो गया। ऋषि पत्नी ने सोचा कि 'पति को जगाना धर्म के अनुकूल होगा या नहीं? ये बड़े कष्ट उठाकर धर्म का पालन करते हैं। कहीं जगाने या न जगाने से मैं अपराधिनी तो नहीं हो जाऊँगी? जगाने पर इनके कोप का भय है और न जगाने पर धर्म लोप का। अन्त में वह इस निश्चय पर पहुँची कि ये चाहे कोप करे, परन्तु इन्हें धर्म लोप से बचाना चाहिए। ऋषि पत्नी ने बड़ी मधुरवाणी से कहा- महाभाग! उठिए सूर्यास्त हो रहा है, आचमन करके सन्ध्या कीजिए। यह अग्निहोत्र का समय है। पश्चिम दिशा लाल हो रही है। ऋषि जरत्कारू जगे, क्रोध के मारे उनके होंठ काँपने लगे। उन्होंने कहा- सर्पिणी! तूने मेरा अपमान किया है, अब मैं तेरे पास नहीं रहूँगा। जहाँ से आया हूँ, वहीं चला जाऊंगा। मेरे हृदय में यह दृढ़ निश्चय है कि मेरे सोते रहने पर सूर्य अस्त नहीं हो सकते थे। अपमान के स्थान पर रहना अच्छा नहीं लगता, अब मैं जाऊंगा। अपने पति की हृदय में कंपकंपी पैदा करने वाली बात सुनकर ऋषि पत्नी ने कहा-भगवान! मैंने अपमान करने के लिए आपको नहीं जगाया है। आपके धर्म का लोप न हो, मेरी यही दृष्टि थी। जरत्कारू ऋषि ने कहा-एक बार जो मुंह से निकल गया, वह झूठ नहीं हो सकता। मेरे तुम्हारे बीच

इस प्रकार की शर्त तो पहले ही हो चुकी है। तुम मेरे जाने

के बाद अपने भाई से कहना कि वे चले गए। यह भी कहना कि मैं यहाँ बड़े सुख से रहा। मेरे जाने के बाद तुम किसी प्रकार की चिन्ता मत करना।

ऋषि पत्नी शोक ग्रस्त हो गई। उसका मुंह सूख गया, वाणी गद्गद् हो गई। आंखों में आंसू भर आए। उसने काँपते हृदय से धीरज धरकर हाथ जोड़कर कहा-धर्मज्ञ! मुझ निरपराध को मत छोड़िये। मैं धर्म पर अटल रहकर आपके प्रिय और हित में संलग्न रहती हूँ। मेरे भाई ने एक प्रयोजन लेकर आपके साथ मेरा विवाह किया था। अभी वह पूरा नहीं हुआ। हमारे जाति-भाई कद्रु माता के श्राप से ग्रस्त है, आपसे एक सन्तान होने की आवश्यकता है। उसी से हमारी जाति का कल्याण होगा। आपका और मेरा संयोग निष्फल नहीं होना चाहिये। अभी मेरे गर्भ से संतान भी तो नहीं हुई। फिर आप मुझ निरपराध अबला को छोड़कर क्यों जाना चाहते हैं? पत्नी की बात सुनकर ऋषि ने कहा- तुम्हारे पेट में अग्नि के समान तेजस्वी गर्भ है। वह बहुत बड़ा विद्वान् और धर्मात्मा ऋषि होगा। यह कहकर जरत्कारू ऋषि चले गये।

पति के जाते ही ऋषि पत्नी अपने भाई वासुकि के पास गई और उनके जाने का समाचार सुनाया। यह अप्रिय घटना सुनकर वासुकि को बड़ा कष्ट हुआ। उन्होंने कहा-बहिन! हमने जिस उद्देश्य से उनके साथ तुम्हारा

विवाह किया था, वह तो तुम्हे मालूम ही है। यदि उनके द्वारा तुम्हारे गर्भ से पुत्र हो जाता तो नागों का भला होता। वह पुत्र ब्रह्माजी के कथनानुसार अवश्य ही जनमेजय के यज्ञ से हम लोगों की रक्षा करता। बहिन तुम उनके द्वारा गर्भवती हुई हो न? हम चाहते हैं कि तुम्हारा विवाह निष्फल न हो। अपनी बहिन से भाई का यह पूछना उचित नहीं है फिर भी प्रयोजन के गौरव को देखते हुए मैंने यह प्रश्न किया है। मैं जानता हूँ कि उन्होंने एक बार जाने की बात कह दी तो उन्हें लौटना असम्भव है। मैं उनसे इसके लिए कहूंगा भी नहीं, कहीं मुझे शाप न देवे। बहिन! तुम सब बात मुझसे कहो और मेरे हृदय से यह संकट का कांटा निकाल दो। ऋषि पत्नी ने अपने भाई वासुकि नाग को ढांढस बंधाते हुए कहा- भाई! मैंने भी उनसे यह बात कही थी, उन्होंने कहा है कि गर्भ है। उन्होंने कभी विनोद से भी कोई झूठी बात नहीं कही है, फिर इस संकट के अवसर पर तो उनका कहना झूठा हो ही कैसे सकता है। उन्होंने जाते समय मुझसे कहा कि नागकन्ये! अपनी प्रयोजन सिद्धि के सम्बन्ध में कोई चिंता नहीं करना। तुम्हारे गर्भ से अग्नि और सूर्य के समान तेजस्वी पुत्र होगा। इसलिए भाई! तुम अपने मन में किसी प्रकार का दुख न करो। यह सुनकर वासुकि बड़े प्रेम और प्रसन्नता से अपनी बहन का स्वागत सत्कार

करने लगा। उसके पेट में शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा के समान गर्भ भी बढ़ने लगा।

समय आने पर वासुकि की बहिन जरत्कारू के गर्भ से एक दिव्य कुमार का जन्म हुआ। उसके जन्म से मातृ वंश और पितृवंश दोनों का भय जाता रहा। क्रमशः बड़ा होने पर उसने च्यवन मुनि से वेदों का सङ्गोपाङ्ग अध्ययन किया। वह ब्रह्मचारी बालक बचपन से ही बड़ा बुद्धिमान और सात्विक था। जब वह गर्भ में था, तभी पिता ने उसके सम्बन्ध में 'अस्ति, (है) पद का उच्चारण किया था, इसलिए उसका नाम 'आस्तीक हुआ। नागराज वासुकि के घर पर बाल्य अवस्था में बड़ी सावधानी और प्रयत्न से उसकी रक्षा की गई। थोड़े ही दिनों में वह बालक इन्द्र के समान बड़कर नागों को हर्षित करने लगा।

देवी भागवात महापुराण के अनुसार

श्री मनसा देवी के बारह नाम

मनसा देवी के बारह नामों की चर्चा देवीभागवत में इस प्रकार की गई है-

जरत्कारू जगद्‌गौरी मनसा सिद्धि योगिनी,
वैष्णव की नागभामिनी शैवी नागेश्वरी तथा।
जरत्कारू प्रिया आस्तीक माता विषहरे चित,
महाज्ञान युता सा देवी विश्व पूजिता।

१. जरत्कारू :- जरत्कारू मुनि के समान क्षीण शरीर देखकर श्री कृष्ण ने इसका नाम जरत्कारू रखा।

२. जगद्‌गौरीः- स्वर्ग लोक, नागलोक ब्रह्मलोक, पृथ्वी लोक तक पूजा हुई तथा सुन्दरी औंर मनोहर है।

३. मनसाः- यह भगवती कश्यप की कन्या है, मन से क्रीड़ा करने के कारण मनसा देवी के नाम से अधिक विख्यात है, जो मनसा ईश्ंवर का ध्यान करती है, वह मनसा देवी इसी कारण उस योग से क्रींड़ा करती है।

४. सिद्ध योगिनीः- इसने तीन युग पर्यन्त कठिन तप किया था। शिवजी से सिद्धयोग प्राप्त होने से यह महाज्ञान योगदायक मृत संजीवनी पराविद्या है।

५. वैष्णवीः-अत्यन्त विष्णुभक्त होने से ये वैष्णवी कहलाती है।

६. नागभामिनीः- नागों के देवता वासुकि नाग की भामिनी (बहिन) होने से नागभामिनी हुई।

७. शैवीः-शिव की शिष्या होने से शैवी कहलाती है।

८. नागेश्वरीः-जनमेजय के यज्ञ में इसी ने नागों की प्राण रक्षा की थी इसीलिए इसका नाम नागेश्वरी भी हुआ।

९. जरत्कारू प्रियाः- महात्मा जरत्कारू मुनींद्र की प्रिय पत्नी की संज्ञा दी गई है।

१०. आस्तीक माताः- महाज्ञान, चारों वेदों के ज्ञाता, तपस्वी आस्तीक मुनि की श्रेष्ठ माता है।

११. विषहरीः- विष का हरण करने में स्वतन्त्र होने से विषहरी कहलाती है।

१२. महाज्ञानयुताः- मनीषी इसे महाज्ञानवती कहते हैं। महाज्ञानवान होने से ये देवी सारे विश्व द्वारा पूजने योग्य है। अतएव इन बारह नामों द्वारा मनसा देवी की पूजा होती है।

जो इन बारह नामों से पूजा करते हैं उनको तथा उनके वंश वालों को सर्पों का भय नहीं रहता। जो इस महा फलदाई श्लोक को पढ़ता है, उसे देखकर सर्प समूह भाग जाते हैं। इस श्लोक को सच्चे मन से दस लाख बार जपने से सिद्धि होती है। जिसको स्तोत्र सिद्धि हो जाए वह विष भी खा जाये तो कोई भय नहीं है। ऐसा पुराणों का कथन है। स्तोत्र सिद्ध कर लेने वाला पुरुष नागों के आसन या बाणों की शैया पर स्थित होने वाला महापुरुष होता है।

मनसा देवी महात्म्य

(पूजन विधि)

देवी भागवत के त्रैलोक्य मंगल कवच के अनुसार जब धर्म स्वयं अपने मुख से मनसोपाख्यान का वर्णन सुना रहे थे तो सब वृतान्त कहने पर उन्होंने पूजा की कि देवताओ! अब क्या सुनना चाहते हो? इस पर नारद जी ने पूछा कि इन्द्र ने उन सती मनसा देवी की स्तुति किस प्रकार की। मैं उस पूजन विधि का क्रम भी सुनना चाहता हूँ। तब श्री नारायण जी बोले-

सस्नातः शुचिरातो घृत्वा धौते च वायसी
रत्न सिंहासने देवी वासया मास भक्तितः
स्वर्गगया जलेनव रत्नकुम्भास्थितेन च।
स्वापयामास मनसा महेन्द्रों वेदमन्त्रतः

वाससी वासयमस वह्नि मुद्धे मनोहरे
स्वांगे चन्दन कृत्वा पादार्घ्य भक्ति संयुतः

भगवान विष्णु की प्रेरणा से भक्तिपूर्वक देवी को पूजकर उन्होंने विविध प्रकार के बाजे वजवाये।

वैभव पुष्पवृष्टिश्च नभसौ तनसोरपि
देव प्रियाज्ञाया तत्र ब्रह्माविष्णुशिवाज्ञा
तुष्टाव साश्रुनेत्रैश्च पुलकांकित विग्रहः
देवित्वाँ स्तोतुमिच्छामि साध्वीनां प्रवरावराम्

फिर आकाश से देवी पर फूलों की वर्षा होने लगी। तब इन्द्र ने ब्रह्मा, विष्णु और शिव की आज्ञा से पुलकित होकर देवी की स्तुति की–हे साध्वियों! मैं परम श्रेष्ठ भगवती आपकी स्तुति करना चाहता हूँ।

परात्परां च परमां न हि स्तोतूं क्षमोधुना
स्त्रोत्राणां लक्षणं वेदें स्वभावाख्यान तत्परम्
नक्षतः प्रकृते वक्तु गुणानां तव
शुद्धसत्व स्वरूपा तब कोपहिंसा विवर्जिता

हे देवी! मैं आपका स्तवन करने में असमर्थ हूँ, आपके स्तोत्र और आपसे सम्बन्धित उपाख्यान वेदों में उपलब्ध हैं मैं आपके गुणों की गणना करने में भी समर्थ नहीं हूँ आप शुद्ध सत्व स्वरूपा क्रोध और बीच हिंसा से सदा दूर रहती हो।

दयारूपां च भगिना क्षमारूपा यथा प्रसूः
त्वया मे रक्षिताः प्राणाः पुत्रताराः सुरेश्वरि

आप मेरी दयारूपी बहिन तथा क्षमारूपी जननी हैं। हे सुरेश्वरी! आपकी कृपा से ही पुत्र और पत्नी के सहित मेरी प्राण रक्षा हो सकी है।

अहं करोमि तवत्पूजाँ प्रीतिस्त्र वर्धयां सदा
नित्या यद्यपि पूज्या त्वं सर्वत्र जगदम्बि के

हे जगदम्बिके ! मैं आपका पूजन करता हूँ, इस कर्म में सदैव मेरी प्रीति बढ़े। आप नित्य स्थित रहने वाली की सर्वत्र पूजा होती है।

तथापि यव पूजां च वर्धयामि सुरेश्वरी
ते त्वामषाढ़ संक्रात्यां पूजायिष्यन्ति भक्तितः।
पचम्या मनसाख्याता मासान्ते वा दिने दिने
पुत्र पौत्रादयस्तेषां वर्धन्ते च धनानि वै।

हे सुरेश्वरी! मैं आपकी पूजा सबसे करवा रहा हूँ। जो आषाढ की संक्राति या नाग पंचमी के दिन अथवा महीने के अन्त में या प्रतिदिन ही आपकी पूजा करेंगे उनके पुत्र पौत्र और धनादि ऐश्वर्य की वृद्धि होगी।

यशस्विनी कीर्तिमन्तो विद्यावन्तो गुणान्विताः
ये त्वां न पूजयिष्यन्ति निदत्यज्ञानो जताः
लक्ष्मी हीना भविष्यन्ति तेषां नागभयं सदा
त्वं स्वयं सूर्यलक्ष्मीश्व बैकुण्ठे कमलालया

ये यशस्वी, कीर्तिवान् विद्यावान और गुणवान होंगे किन्तु जो आपका पूजन न करेंगे और अज्ञान वंश आपकी निन्दा करेंगे वे लक्ष्मीहीन हो जायेंगे। उन्हें सर्पों का भय सदा बना रहेगा। आप स्वयं ही बैकुण्ठ में कमला कहलाने वाली लक्ष्मी है।

यां हि त्वां भावयेन्नित्यं स त्वां प्राप्तोनित्परः
इन्द्रश्च मनसा स्तुत्वा गृहित्वा भगनीवरम्।
प्रजागाम स्वभवनं भूषया सपरिद्‌टछेम्
पुत्रेण साधम् सा देवि चिरंतस्यौ पितुर्गहे

हे देवी! जो आपका निरन्तर स्मरण करते है उन्हें आपकी शीघ्र प्राप्ति होती है। इस प्रकार मनसा देवी की स्तुति करके और उनसे वर प्राप्त करके देवराज इन्द्र अपने भवन को चले गये। इधर मनसा ने चिरकाल तक अपने पुत्र के साथ पिता के गृह में (कश्यपजी के यहाँ) निवास किया।

भ्रातः सः पूजिता शश्वन्मन्या वंद्या च सवता
गोयाकात्सुरभिब्रह्मान तत्रागत्यं सुपूजिताम्।
तां स्नापयित्वा क्षीरेण पूजया मास सादरम्
ज्ञान च कथयामास गोप्यं सर्व सुदुर्लभम्

उनके भाई सदा उनका मान और पूजन करते थे। फिर गौलोक से सुरभि नामक गाय ने वहाँ आकर अपने दुग्ध से मनसा देवी को स्नान कराया व पूजा की और

साथ ही साथ अत्यन्त गोपनीय और दुर्लभ ज्ञान का उपदेश किया।

तथा देवैः पूजिता सा स्वर्गलोक पुनर्ययौं
इन्द्रस्तोत्र पुण्य बीजं मनसा पूजयेत्पठेत्।
तस्यया नागभयं नास्ति तस्य वथोद्भवस्य च
विश भवेत्सुधा तुल्यं सिद्धं स्तोत्रौ यदा भवेत।

तब देवताओं द्वारा पूजित मनसा देवी सुरभि के पास स्वर्गलोक को गई। यह इन्द्र का स्तोत्र पुण्य का बीज है। जो मनसा देवी को पूजा और इस स्तोत्र का पाठ करता है, उसे सांपों का भय नहीं रहता और उनके वंश की वृद्धि होती है।

पंचलक्षजपेनै सिद्ध स्तोत्रौ भवेन्नरः
सर्पशायी भवेत्सोऽपि निश्चितं सर्पवाहनः।

यह स्तोत्र पांच लाख की संख्या में जपने से सिद्ध होता है। तब सिद्ध करने वाला मनुष्य सर्पों की शैय्या पर शयन करने और सर्पो की सवारी करने में समर्थ हो जाता है।

श्री मनसा देवी का जप

विधि तथा महात्म्य

जिस महाज्ञानयुक्त सिद्ध देवी का ध्यान बड़े-बड़े ज्ञानियों ने किया, उस महान मनसा देवी का सामवेदोक्त मूल मंत्र इस प्रकार से है -

"ऊँ हीं श्री क्ली ऐ मनसा दे व्यै स्वाहा"

इस मंत्र के पांच लाख बार जप करने से सिद्धि होती है। सिद्धि करने वाले मनुष्य को स्नान कर एकांत स्थान पर बैठ ईशानी देवी का आवाहन कर यत्न से शुद्ध जाप करना चाहिए। इस मंत्र का 'कल्पतरु' नाम पुराणों ने दिया है, ज़िसका अर्थ पूर्ण करने वाला है।

जिसको इस मंत्रं की सिद्धि हो, वही इस पृथ्वी पर सिद्ध है। उसके लिए विष भी अमृत के समान हो जाता है। वह धन्वंतरि के समान होता है।

मनसा देवी मंदिर जाने के मार्ग

यह प्राचीन मन्दिर ब्रह्मकुण्ड से पश्चिमोत्तर भाग में शिवालिक पर्वत पर स्थित है। इस पर जाने के लिए दो मार्ग हैं, एक रतन टाकिज के पास से उड़न खटोले द्वारा तथा दूसरा गऊघाट के ठीक सामने बनी सीढ़ियों द्वारा (पैदल) जाता है. पर्वत से हरिद्वार नगर का दृश्य बड़ा सुन्दर लगता है।

श्री मनसा देवी उड़न खटोला (ट्राली)

तीर्थ यात्रियों को मनसा देवी के दर्शन कराने हेतु स्थानीय रतन टाकिज से लेकर मनसा देवी तक के ६०० मीटर लम्बे रास्ते में उड़न खटोला सुविधा यात्रियों के लिए उपलब्ध है इस रज्जु मार्ग द्वारा एक घन्टे में लगभग ८०० यात्री मनसा देवी के दरबार तक पहुँचाने के लिए २५ ट्रालियां प्रयोग होती है।

मन्दिर तथा दर्शन

यह स्थान भगवती का सिद्ध पीठ माना जाता है। भगवती का यन्त्र त्रिकोण है। अतः त्रिकोणात्मक दृष्टिकोण से हरिद्वार क्षेत्र में तीनों सिद्ध पीठों में यह मन्दिर एक कोण पर बना हुआ है। त्रिकोण के तीनों मन्दिर है – १. मनसा देवी मन्दिर २. चण्डी देवी मंदिर ३. माया देवी मंदिर।

मनसा देवी मन्दिर की यात्रा बड़ी ही सुगम है। मन्दिर पहाड़ी पर तो है लेकिन चढ़ाई बहुत कम है जिसे सभी सरलता से चढ़ लेते है। लगभग १ किमी. की साधारण चढ़ाई है। मंदिर पर पहुँचकर आराम करने की जगह है वर्षा तथा धूप से बचने के लिए कमरे व हाल हैं। यहीं ठण्डा पानी भी यात्रियों को पिलाया जाता है।

मनसा देवी का यह मंदिर प्राचीन व सिद्धपीठ है। हरिद्वार आने वाले यात्रियों को यहाँ के दर्शनों से मन की

जो शान्ति प्राप्त होती है, वह अकथनीय है। मंदिर से दीखने वाला हरिद्वार नगर और गंगाजी के लुभावने दृश्य यात्री को अपनी ओर आकर्षित करते हैं।

मनसा देवी शक्ति माँ दुर्गा का ही प्रतिरूप है, जो भक्तों की मनसा (इच्छा) को पूर्ण करती है। मंदिर के वाम भाग में हवन कुण्ड तथा शीतला देवी का मंदिर हैं दक्षिण भाग में चामुण्डा देवी और श्री लक्ष्मी नारायण जी का मन्दिर है, सन्मुख भगवान शंकर जी मंदिर है, पश्चिम की ओर शिवजी का प्राचीन तथा प्रधान मन्दिर है। मन्दिर की परिक्रमा में भी विभिन्न देवी देवताओं की सुन्दर मूर्तियां दीवारों पर बनाई गई हैं।

मन्दिर के पीछे से एक मार्ग सूर्य कुण्ड को जाता है, वह भी प्राचीन स्थान है। लगभग एक किलोमीटर उत्तर में सूर्य कुण्ड है और वहीं से एक अन्य मार्ग हर की पैड़ी के पास निकलता है।

श्री मनसा देवी की पूजन सामग्री

रोली, मौली, कपूर, केशर, चन्दन, यज्ञोपवीत, चावल, पुष्प, पुष्पमाला, पंचामृत, पिसी हुई हल्दी, सिन्दूर, गुलाल, अबीर, काजल, कण्ठसूत्र, धूप, दीपक, अगरबत्ती, बिल्वपत्र, दूर्वा, नैवेद्य, पान, सुपारी, लौंग, ईलायची, ऋतु के अनुसार फल, नारियल, गंगाजल, कुशासन, भगवती का [illegible], चुन्नी।

श्री मनसा देवी का इतिहास

(देवी भागवत के अनुसार)

जब मनुष्य नागों से बहुत व्याकुल हुए, तो कश्यप की शरण में गए। तब ब्रह्मा के साथ मिलकर कश्यप ने मन्त्रों का निर्माण किया, वे मन्त्र वेद के बीजानुसार ब्रह्मा के उपदेश से विषहरण मन्त्र बने। तब सब मन्त्रों की अधिष्ठात्री देवी को मन से स्मरण किया तो देवी प्रकट हुई। देवी का मन से पूजन किया और वह मन से प्रकट होने के कारण मनसा नाम वाली हुई। वह मनसा देवी कैलाश पर्वत पर शंकर जी के स्थान पर गई, जहाँ उसने भक्ति से पूजन कर शंकर जी को संतुष्ट किया। देवी ने सहस्त्रों वर्षों तक शिवजी की सेवा की, तब कहीं आशुतोष शिव उस पर प्रसन्न हुए। शिवजी ने उसको महाज्ञान देकर सामदेव का ज्ञान कराया। तब आठ अक्षर का कल्पतरू कृष्ण मन्त्र उसको दिया तथा त्रैलोक्य मंगल नामक कवच और पूजा का क्रम भी बताया।

शंकर जी की आज्ञा से साध्वी देवी ने पुष्कर में जाकर श्रीकृष्ण जी की तीन युग पर्यन्त आराधना की। आराधना सिद्ध हुई और देवी ने कृष्ण का दर्शन पाया। कृष्ण जी ने कृषाँगी बाला को देखकर उसे जरत्कारू नाम से सम्बोधित किया। इस प्रकार कल्याणी ने सिद्धि प्राप्त

की। फिर कश्यप मुनि के नागों ने और मनुष्यों ने उसका पूजन किया। इससे सुब्रता मनसा त्रिलोकी में पूजित हुई। फिर कश्यप जी ने उसे जरत्कारू ऋषि को दिया। मुनिश्रेष्ठ की विवाह करने की इच्छा न थी, लेकिन जैसा कि आप पढ़ चुके हैं, विशेष मनसाओं की पूर्ति के लिए एक शर्त पर उन्होंने इस कन्या को पत्नी रूप में स्वीकार किया।

फिर अपनी पत्नी को त्याग कर मुनि जरत्कारू तो तप करने चले गए और देवी मनसा बार-बार शोकाकुल होकर श्रीकृष्ण जी के चरणकमल का स्मरण कर शिवजी के स्थान कैलाश पर्वत पर गई। वहाँ शोक से व्याकुल मनसा को पार्वती ने समझाया, तब एक दिन मंगल मुहुर्त में साध्वी ने ज्ञानियों के गुरु, पुत्र आस्तीक को जन्म दिया। शिवजी ने स्वयं उस बालक के कल्याण निमित्त वेद पाठ कराया। जब आस्तीक कुछ बड़ा हुआ तो वह भी शिवजी की आज्ञा से पुष्कर में तप करने को गया, वहाँ पर आस्तीक को जो महामन्त्र शिवजी ने दिया था, उसका जप करते-करते तीन लाख वर्ष व्यतीत हो गये, तब फिर आस्तीक योगी होकर माता के पास लौट आए। मनसा अपने पुत्र सहित पिता कश्यप के आश्रम में आ गई, वहाँ कश्यप अपनी कन्या के आगमन से अति प्रसन्न हुए और अपने दौहित्र के कल्याणार्थ असंख्य ब्राह्मणों को भोजन कराया।

मनसा और आस्तीक चिरकाल तक कश्यप के आश्रम

में रहे। उसी समय की बात है परीक्षित को ब्राह्मण का शाप हुआ था कि एक सप्ताह में तक्षक तुमको कोटेगा। यह सुनकर राजा परीक्षित ऐसे स्थान पर चले गये जहाँ पवन भी नहीं जा सकता थी। एक संप्ताह होने पर तक्षक राजा परिक्षित को काटने जा रहा था कि रास्ते में एक ब्रह्मण मिला। तक्षक की ब्रह्मण से बात करने पर पता चला कि वह ब्रह्मण राजा को जीवित करने जा रहा है, तक्षक ने प्रमाण मांगा और पास खडे हरे-भरे वृक्ष को अपने जहर से जला दिया, ब्रह्मण ने उसी समय अपने मंत्र बल से वृक्ष को दुबारा हरा-भरा कर दिया, तक्षक यह देखकर हैरान हो गया और ब्रह्मण से पूछा कि वह किस अनुराग में जा रहा है, तब ब्रह्मण ने धन की बात कही। तक्षक ब्राह्मण को मणि दे दी। मणि लेकर ब्राह्मण प्रसन्नता से घर लौट गया।

तक्षक ने राजा के पास पहुंचकर सिंहासन पर विराजमान राजा को डस लिया, जिससे परीक्षित की तत्काल मृत्यु हो गई। तब जनमेजय ने पिता के संस्कार कराए और सर्पसत्र यज्ञ किया। सर्पयज्ञ में ब्रह्मतेज के कारण सर्पों के समूह नष्ट होने लगे तो तक्षक नाग भी भयभीत होकर इन्द्र की शरण में पहुँचा। तब यज्ञ के ब्राह्मण तक्षक के विनाश का उपाय सोचने लगे। इन्द्रादि देवता और ब्राह्मण मिलकर मनसा के पास गए। तब

माता की आज्ञा से आस्तीक ने यज्ञ में आकर जनमेजय से तक्षक के प्राणों की याचना की। तब राजा ने ब्राह्मणों की सलाह से तक्षक को अभय वर दिया और यज्ञ समाप्त करके ब्राह्मणों को दक्षिणा दी।

फिर विप्र, मुनि और देवता सबके सब मनसा के पास गये । वहाँ उन्होंने पृथक-पृथक पूजन करके मनसा की स्तुति की। नारद जी ने पूछा कि इन्द्र ने किस विधि से और किस स्तोत्र से मनसा को प्रसन्न किया था, वह भी बतलाइये। तब श्री नारायण जी ने मनसा देवी को प्रसन्न करने वाली पूजन विधि का वर्णन इस प्रकार से किया–

गणेश च दिनेश बहिन विष्णु शिव शिवाम
सयूज्यादो देव षटकं पूज्यामास तो सतोमे।

इन्द्र ने स्नान कर धुले हुए वस्त्र पहने फिर मनसा देवी को रतन सिंहासन पर प्रतिष्ठित किया और स्वयं गंगाजल से परिपूर्ण रत्नमय कलश की स्थापना की। फिर उन्होंने उस जल से भगवती को वेद मन्त्रों का उच्चारण करते हुए स्नान कराया और शुद्ध चिन्मय वस्त्र धारण कराये। सर्वांग में चन्दन लगाकर भक्ति पाद्य और अर्घ्य समर्पित किया। उस समय सर्वप्रथम गणेश, फिर सूर्य, तत्पश्चात् अग्नि, विष्णु, शिव तथा शिवा इन छः देवताओं

की पूजा करके उन्होंने मनसा देवी का पूजन किया था।

ऊँ ह्रीं श्री मनसादेव्यं स्व हेतयध च मन्त्रतः
दशाक्षरेण मूलेन दयौ सर्व यथोचितम
वत्वा षोडषोप चारान्दुर्वलान्देन नायकः
पूजयामास भक्तया च विष्णुना प्रेरिता मुद्रा
वाद्यं नाना प्रकारं च वादयामस तत्र वै
"ऊं ह्रीं श्री मनसा दैव्यै स्वाहा"

यह दशाक्षर मूल मन्त्र का उच्चारण करते हुए सर्व पदार्थ भगवती को भेंट किये। इस प्रकार षोडषोपचार से देवी का पूजन किया।

सर्पों की मनसा देवी कैसे बनी?

धन्वंतरि देवताओं के वैद्य हैं। उनमें अनेक पारलौकिक शक्तियाँ हैं। जड़ी-बूटियों का अक्षय भंडार हैं उनके पास मंत्र शक्ति के बल पर वह कुछ भी कर सकते हैं, ये सारी शक्तियाँ उन्होंने भगवान शंकर से प्राप्त की थी।

एक बार धन्वंतरि जी अपने आराध्य भगवान शंकर के दर्शन के लिए कैलाश जा रहे थे, साथ में शिष्य मंडली थी। मार्ग में उन्हें तक्षक नाग दिखाई दिया। वह अपनी जीभ लपलपा रहा था। उसकी फुंकार से विषभरी आग की लपटें निकल रही थी। बहुत से विषैले नाग भी उसके साथ थे।

धन्वंतरि को देख, तक्षक क्रोध से भर उठा। फुंकार मारते हुए उनकी ओर लपका। यह देख, धन्वंतरि का शिष्य दम्भी हँसने लगा। बोला-'मूर्ख तक्षक' क्या तू हमारे महान आचार्य तक पहुँच पाएगा? तू उनकी शक्ति को नहीं जानता। ले, पहले मुझसे ही निपट ले।' यह कहते हुए दम्भी ने मंत्र पढ़ा। मंत्र शक्ति से सारा विष उगल दिया। वह निर्जीव-सा एक ओर लुढ़क गया। उसके साथी नागों का भी यही हाल हुआ। अब दम्भी और उसके साथियों ने उन बड़े २ आकार वाले नागों को

केचुएँ की तरह घुमाकर पर्वत की एक घाटी में फेंक दिया।

तक्षक के कुछ साथी दूर थे। वे भय से काँप उठे। भागे-भागे नागलोक पहुँचे। वहाँ नागों के राजा वासुकि से सारी बात बताई। वासुकि क्रोध से भर उठे। उन्होंने भयानक विष वाले असंख्य सांपों को वहाँ भेजा। इन सर्पों में प्रमुख थे- द्रौण, कालिय, ककटक, पुंडरीक और धनंजय। ये सभी इतने जहरीले और भयानक थे कि उनकी फुँकार से पत्थर भी जलकर राख हो जाता था।

सर्पों की यह सेना पर्वत पर पहुँची। इस समय धन्वंतरि अपने शिष्यों को कुछ समझा रहे थे। उन्हें तक्षक वाली घटना का पता तो चल गया था, मगर निश्चिन्त थे। सर्पों की सेना देख, धन्वंतरि जी ने दम्भी सहित अपने शिष्यों को उधर भेजा।

इस बार दम्भी कुछ नहीं कर पाया। वह मन्त्र पढ़ता इससे पहले ही सर्पों ने अपनी फुँकारों से भयंकर विष उगलगा शुरू कर दिया। विष के प्रभाव से दम्भी और उसके साथी निर्जीव होकर गिर पड़े। धन्वंतरि जी ने यह देखा तो अपने आराध्य भगवान शंकर का स्मरण करते हुए मंत्र पाठ किया। अमृत की वर्षा होने लगी। अमृत की बूंद मुंह में पड़ते ही उनके शिष्य जीवित हो गये। इसके बाद धन्वन्तरि जी ने अपने मंत्रों से उन सारे सर्पों को

मूर्च्छित कर दिया। अब वे अपना फन और शरीर इधर-उधर हिला भी नहीं पा रहे थे, किसी तरह मन्त्र की शक्ति से बचे एक दो सर्प नागलोक आए। आकर सारा वृतांत वासुकि को सुनाया। वासुकि चिंतित हो उठे। नागलोक की सारी प्रतिष्ठा ही खतरे में पड़ गई थी। उन्होंने क्षण भर कुछ सोचा। फिर अपनी बहन मनसा को बुलाया और उससे कहा - "तुम सर्वशक्ति सम्पन्न हो, आज नागों पर संकट आया है, तुम उसकी सहायता करो।"

नागराज वासुकि की आज्ञा मानकर मनसा अकेली ही धन्वंतरि जी से लड़ने चल पड़ी। वह क्रोध से काँप रही थी। लग रहा था जैसे धन्वंतरि और उनके शिष्यों को भस्म कर डालेंगी।

पर्वत पर पहुँचकर मनसा ने धन्वंतरि जी की ओर देखा। बोली-'तुम सिद्ध पुरुष हो। अपने बल का बड़ा घमण्ड है तुम्हें। तुमने नागों की जो दुर्दशा की है, उसे मैं भूल नहीं सकती। तुम नागों के शत्रु गरुड़ के शिष्य हो। भगवान शिव तुम्हारे आराध्य है। फिर मैं तुमसे नागों का बदला लेकर रहूँगी।

मनसा सरोवर से कमल का एक फूल ले आई। मंत्र शक्ति फूल में भर दी। फिर उसे धन्वंतरि जी की ओर फेंक दिया। मंत्र की शक्ति से फूल अग्नि की भयंकर लपटों में बदल गया। लपटें तेजी से धन्वंतरि जी की ओर

बढ़ने लगी। यह देख, धन्वंतरि जी ने धरती से एक मुट्ठी धूल उठाई! मंत्र पढ़कर उसे जलते हुए फूल की ओर फेंक दी। फूल तुरन्त राख बनकर जमीन पर गिर पड़ा। अब मनसा ने दुःखी होकर नागपाश हाथ में लिया! नागपाश एक लाख विषैले नागों से बना हुआ था। नाग पाश को देखकर धन्वंतरि जी कुछ विचलित से हो गए। उन्होंने गरुड़ को याद किया। गरुड़ तुरंत आ गए। उन्होंने चोंच मार-मारकर सब नागों को मौत की गोद में सुला दिया।

अब मनसा बहुत ही दुखी हुई। उन्हें लगा, पराजय पास खड़ी है। तभी मनसा को याद आया-भगवान शिव ने उनसे प्रसन्न होकर एक 'अमोघ शूल' दिया था। इसकी मार से बचना मुश्किल था। मनसा ने शूल हाथ में उठा लिया। शूल धन्वंतरि जी की ओर फेंकना ही चाह रही थी कि तभी भगवान शिव और ब्रह्माजी बीच में आकर खड़े हो गए।

शिव और ब्रह्मा को देख कर मनसा का हाथ रुक गया। उन्होंने उन दोनों देवों को प्रणाम किया। इस बीच धन्वंतरि जी ने भी उठकर उन्हें नमस्कार किया। ब्रह्मा जी कहने लगे-"आप दोनों ही सम्माननीय हैं। भगवान शिव के आप दोनों भक्त हैं। धन्वंतरि जी देवताओं के वैद्य हैं, इनका जन्म दूसरों के कल्याण के लिए है और आप देवी स्वंरूप मनसा जी है। देवताओं का काम आपस में लड़ना

नहीं है।" अब तक मनसा जी भी शान्त हो गई थी। बोली- मुझे भी अपनी गलती पर पश्चाताप है। शिव बोले-"धन्वंतरि जी, मनसा जी आपकी पूज्य हैं। आप इन से क्षमा मांगे।" धन्वंतरि जी ने वैसा ही किया। मनसा जी ने मुस्करा कर उन्हें क्षमा कर दिया। ब्रह्माजी बोले-"आज से सर्पों की देवी हुई मनसा। अब यह देवी बनकर सारे संसार में पूजी जायेंगी।" इसके बाद ब्रह्माजी के आशीर्वाद से मरे हुए सभी नाग जीवित हो गये। मनसा देवी उन्हें लेकर नागलोक लौट गई।

मनसा देवी की पुष्पांजलि

सेवन्तिका वकुल चम्पक पाठलाब्जैः,
पुन्नाग जाति करवीर रसाल पुष्पैः।
बिल्व प्रवाल तुलसीदल मंजरीभिः,
त्वां पूजयामि जगदीश्वरि मे प्रसीद।
नाना सुगंधि पुष्पाणि तथा कालोद् भवानी च,
पुष्पांजलि मयादत्तं गृहाण परमेश्वरि।
मनसा देव्यैः नमः पुष्पांजलि समर्पयामि।।

इस मंत्र से पुष्पांजलि का समर्पण करके प्रदक्षिणा करनी चाहिए और निम्न मंत्र से क्षमा प्रार्थना करनी चाहिए।

पापाहं पापकर्माहं पापात्मा पाप संभवः,
त्राहिमां सर्वदा मातः सर्व पाप पराभवः।
ॐ शाँति शाँति शाँति

भारत में

नौ देवियों के प्रसिद्ध मंदिर

सती का मन्दिर

हरिद्वार के मायापुरी क्षेत्र में यह महान प्रजापति दक्ष के मन्दिर के नाम से विख्यात है। हरिद्वार रेलवे स्टेशन से लगभग साढ़े तीन किलोमीटर की दूरी पर है।

मनसा देवी मन्दिर

इस मन्दिर के बारे में आप पूरी कथा इस पुस्तक में पढ़ चुके है। चंड़ीगढ़ के समीप मनी माजरा नामक स्थान पर भी मनसा देवी का एक प्रसिद्ध मन्दिर है। श्रद्धालु भक्त इस स्थान की यात्रा भी अवश्य करने जाते हैं।

श्री नैना देवी का मन्दिर

पंजाब में आनन्दपुर साहिब नामक स्थान से उत्तर में शिवालिक पर्वत की चोटी पर यह मन्दिर है। यहाँ सती के नेत्र गिरे थे, उसी से नैना देवी नाम सिद्ध हुआ है। इस पहाड़ी की चढ़ाई लगभग बारह किलोमीटर है।

श्री वैष्णों देवी गुफा व मन्दिर

वैष्णों देवी का मन्दिर कटरा से १४४ कि.मी. है। कटरा से भूमि का मन्दिर, चरणपादुका, आदि कुमारी, सांझीछत, हाथी मत्था आदि मुख्य स्थलों से होकर वैष्णों देवी के दरबार तक पहुँचते है। गुफा के अन्दर महाकाली, महालक्ष्मी व महासरस्वती के दर्शन पिण्डी रूप में हैं। वैष्णों देवी मंदिर हरिद्वार में भी बनाया है जो कि भव्य तथा जम्मू वाले मंदिर के समान ही बनाया गया है।

श्री ज्वाला जी का मन्दिर

पंजाब के होशियारपुर जिले में स्थित इस स्थान पर देवी के दर्शन ज्वाला (आग की लपटों) के रूप में है। लपटे वहाँ की एक पहाड़ी भूमि से निकलती हुई सदैव जलती रहती हैं।

श्री दुर्गा जी का मन्दिर

सच्चे मन से स्थापित किए गए दुर्गा जी के किसी भी मन्दिर के दर्शनों का वर्तमान युग में बड़ा महात्म्य पुराणों में कहा गया है। दुनिया के किसी भी कोने में दुर्गा जी की प्रति रूप की स्थापना करके आदि शक्ति की आराधना की जा सकती है।

कोट काँगड़े वाली देवी का मन्दिर

वहाँ पर देवी ब्रजेश्वरी देवी के नाम से निवास करती है और कोट काँगडे वाली देवी के नाम से प्रसिद्ध है। यहाँ पर एक तारादेवी का मन्दिर है, जो भूचाल आने पर भी नहीं गिरा था। नगरकोट धाम की इस देवी की बड़ी मान्यता है।

माता चिन्तपुरनी देवी का मन्दिर

होशियारपुर से होकर ही इस मन्दिर तक जाया जाता है। यह स्थान जैसे कि इसके नाम से ही पता लगता हैं, चिन्ता को पूर्ण करने वाला है। नई जगहों पर इस स्थान का वर्णन जालन्धर पीठ के नाम से मिलता है। ऐसी मान्यता है कि यहाँ सती के चरण गिरे थे।

माता बाला सुन्दरी देवी का मन्दिर

नाहन रियासत के त्रिलोकपुर नामक स्थान पर यह प्रसिद्ध मन्दिर है। यह मन्दिर त्रिलोकपुर वाली माता के नाम से भी जाना जाता है। जो भक्त त्रिलोकपुर वाली माता बाला सुन्दरी के दर्शन करते हैं, उनकी मनोकामना पूर्ण होती है।

५१ शक्ति पीठ और शक्तियाँ

श्रीमद् देवी भागवत महापुराण में ही भगवती के विभिन्न सिद्ध पीठ और शक्तियों की गणना भी दी गई है।

भगवती सती ने अपने पिता प्रजापति दक्ष के यज्ञ में जब भगवान शंकर को न बुलाये जाने पर उनके अपमान से क्रोधित होकर यज्ञ के हवन कुण्ड में ही अपनी आहुति दे दी थी तब वीरभद्र ने आकर तीनों लोकों का संहार करना चाहा तो ब्रह्मादि देवता शिवजी की शरण में गए। दक्ष को मारकर यज्ञ का विध्वंस किया जा चुका था, तब शिवजी ने देवताओं को अभय दान दिया और दक्ष के धड़ में बकरे का सिर लगाकर उसे जीवित किया। फिर शिव जी ने यज्ञ के स्थान पर सती की देह को दग्ध देखा तो ये उस मृत देह को कन्धे पर रखकर शोकाकुल होकर तीनों लोकों में घूमने लगे। शिवजी की यह स्थिति देख देवताओं ने मिलकर विचार किया कि शिवजी के कन्धे से लटकी सती की देह के अंग काट-काट कर गिरा दिए जायें। तब भगवान विष्णु ने धनुष बाण लेकर सती की देह के खण्ड-खण्ड करके गिराने शुरू कर दिए। जहाँ जहाँ ये सती के अंग गिरते रहे, वह स्थान शक्ति पीठ माने जाने लगे। कुल ५१ स्थानों पर सती की देह के अंग

गिरे माने जाते हैं लेकिन इसके अतिरिक्त भी जिन-जिन जगहों पर शक्ति का निवास माना गया, उन्हें भी सिद्ध पीठ कहा जाता है।

१०८ सिद्ध पीठ

कुल मिलाकर १०८ स्थान भगवती के सिद्ध पीठ और शक्ति के निवास स्थान कहे गये है। जिनके सुनने मात्र से मनुष्य पापरहित हो जाता है। जो लोग इन स्थानों में रहकर विशेष जप, पुरश्चरण या तन्त्र सिद्धि करते हैं, उन्हें विशेष लाभ प्राप्त होता है। सिद्ध पीठों और शक्ति के निवास स्थानों के नामों के साथ-साथ देवी के जिस रूप की आराधना उस स्थान पर की गई है, वह इस प्रकार कहे हैं।

१. वाराणसी: विशालाक्षी।
२. नैमिषारण्य: लिंगधारिणी।
३. प्रयाग: ललिता।
४. गन्धामादन: क.मुकी।
५. मान सरोवर: कुमुदा।
६. दक्षिण: विश्वकामा।
७. उत्तर: विश्व काम प्रपरिणी।
८. गोमन्त: गोमती।
९. मन्दराचल: कामचारिणी।
१०. चैत्ररथ: नदोत्कटा।
११. हस्तिनापुर: जयन्ती।
१२. कान्यकुब्ज: गौरी।
१३. मलयाचल: रम्भा।
१४. एकाग्रपीठ: कीर्तिमती।
१५. विश्वपीठ: विश्वेश्वरी।
१६. पुष्कर: पुरुहुता।

१७. केदारपीठः समार्ग दायिनी।१८. हिमवानः मन्दा।
१९. गोकर्णपीठः भद्रकणिका। २०. थानेश्वरी पीठः भवानी।
२१. बिल्वकः बिल्वपत्रिका। २२. श्री शैलः भद्रा।
२३. बाराह पर्वतः जय। २४. कमलालयः कमला।
२५. रुद्रकोटिः रुद्राणि। २६. कालाँजरः काली।
२७. शालिग्राम पीठः महादेवी।२८. शिवलिंग पीठः जलप्रिया।
२९. महालिंग पीठः कपिलका।३०. माकौटः मुकटेश्वरी।
३१. मायापुरीः सती। ३२. शिवालिक पर्वतः मनसा
३३. गयाः मंगला। ३४. पुरुषोत्तम पीठः विमला।
३५. सहस्राक्ष : उत्पलाक्षी। ३६. हिरण्याक्षः महोत्पला।
३७. विपाशाः अमोघासी। ३८. पंडवर्धन पीठः पाँडला।
३९. सुपार्श्वः नारायणी। ४०. त्रिकट पर्वतः वैष्णो।
४१. विपुलः विपला। ४२.मलयाचल पर्वतः कल्याणी।
४३ सह्यादि पर्वतः एकवीरा। ४४. हरिश्चन्द्र पीठः चन्द्रिका।
४५. रामतीर्थः रमणां। ४६. यमुना पीठः यगावती।
४७. कोटितीर्थः कोटवी। ४८. माधव वनः सुगन्धा।
४९. गोदावरी तीर्थ त्रिसंध्वा। ५०. गंगाद्वारः रति प्रिया।
५१. शिव कुण्डः शमानन्दी। ५२. देबकीतट पीठः नन्दिनी।
५३. द्वारावतीः रुक्मणि। ५४. वृन्दावनः दाधा।
५५. मथराः परमेश्वरी। ५६. चित्रकूटःसीता।

५७. विध्याचलः विध्यबासिनी। ५८. करबीरः महालक्ष्मी।
५९. विनायक पीठः उमा। ६०. वैद्यनाथः आरोग्य।
६१. महाकालपीठः माहेश्वरी। ६२. उष्णतीर्थः अभया।
६३. विन्ध्य पर्वतः नितम्बा। ६४. माण्डयः माण्डवी।
६५. माहेश्वरी:स्वाहा। ६६. अमरकंटकः चंडिका।
६७. सोमेश्वरः वरारोहा। ६८. प्रभासक्षेत्रः पष्करावती।
६९. सरस्वती पीठ देवमाता। ७०. समुद्रतट परः पारावारा।
७१. महालयः महाभागा। ७२. पयोष्णीः पिंगलेश्वरी।
७३. कृतशौचतीर्थः सिंहिका ७४. कीर्तिक्षेत्रः अतिशांकरी।
७५. वर्तक पीठः उत्पला ७६. सोमनदी के संगम सुभद्रा।
७७. सिद्ध वनक्षेत्रः मातालक्ष्मी ७८. भरताश्रमः अनंगा।
७९. जालन्धरः विश्वमुखी। ८०. किष्किंधाः तारा।
८१. देवदास वन। पष्टि। ८२. काश्मीर मंडलः मेघा
८३. हिमाद्रि पर्वतः भीमादेवी ८४. बिश्वेश्वर क्षेत्रः तुष्टि।
८५. कपाल मौचनः शुद्धि ८६. कायावरोहण क्षेत्रः माय
८७. मखोबार पीठः धरा ८८. पिंडरकः धृति।
८९. चन्द्रभागा तटः कला ९०. आच्छोद पीठः शिवधारिणी।
९१. बेणा के तटः अमृता। ९२. बदरीवनः उर्वशी।
९३. कुरुक्षेत्रः औषधि ९४. कुशद्वीपः कुशीदका।
९५. हेमकटः मन्मथा ९६. कुमदपीठः सत्यवादिनी।

९७. अश्वत्थ तीर्थः वन्दनीया। ९८. वैश्रवणालयः निधि।
९९. वेदवन क्षेत्रः गायत्री। १००. शिव की सन्निधिःपार्वती
१०१. देवलोकः इन्द्राणि। १०२. ब्रह्मलोकः सरस्वती।
१०३ सूर्य बिम्बःप्रभा। १०४. मातृकाओंः वैष्णवी।
१०५. सतियोंः अरून्धति। १०६. अप्सराओंः तिलोत्तमा।
१०७. पराणों में दुर्गा १०८. प्राणियों के चित्त मेंः ब्रह्मवला

इन १०८ पीठों में इतनी ही संख्या में देवी विराजमान हैं इनका जप करने से अनेक पुरुषों को सिद्धि प्राप्त हो चुकी हैं। जहाँ इन १०८ नामों वाली पुस्तक रखी हो वहा ब्रह्मादि के योग का भय नहीं रहता तथा सौभाग्य से दिन प्रतिदिन वृद्धि होती रहती है तथा कुछ भी दुलर्भ नहीं रहता। भगवती का पूजन करने वाले के सामने देवता भी नतमस्तक होते हैं। श्राद्ध के समय में जो श्राद्धकर्त्ता इन नामों का उच्चारण करे तो उनके सब पितर तृप्त होकर परमगति को प्राप्त होते हैं। ये १०८ तीर्थ देवी के साक्षात् विग्रह है। प्रत्येक व्यक्ति को इन स्थानों की यात्रा करनी चाहिए।

॥ श्री दुर्गा जी की आरती॥

जै अम्बे गौरी मैया, जै मंगल मूर्ति मैया,
जै आनन्द करनी, तुमको निशदिन ध्यावत।
हरि ब्रह्मा शिवजी

मांग सिन्दूर विराजत टीको मृगमद को,
उज्जवल से दोउ नैना चन्द्र बदन नीको (१)
कनक समान कलेवर रक्ताम्बर राजे,
रक्त पुष्प गले माला कंठन पर साजे (२)
के हरि वाहन राजत खड़ग खप्पर धारी,
सुर नर मुनि जन सेवत तिनके दुःख हारी (३)
कानन कुण्डल शोभित नासा गज मोती,
कोटिक चन्द्र दिवाकर सम राजत ज्योति (४)
शुम्भ निशुम्भ विदारे महिषासुर घाती,
धूम्र विलोचन नैना निशि दिन मदमाती (५)
चण्ड मुण्ड संहारे, शोणितबीज हरे,
मधु कैटभ दोऊ मारे, सुर भयहीन करे, (६)
ब्रह्माणी रुद्राणी तुम कमला रानी,
आगम निगम बखानी, तुम शिव पटरानी (७)
चौसठ योनिगी मंगल गावत नृत्य करत भैरों
बाजत ताल मृदंग अरु बाजत डमरू (८)
तुम हो जग की माता, तुम ही हो भरता,
भक्तन की दुख हरता, तुम ही हो भरता (९)
भुजा चार अति शोभित खड्ग खप्पर धारी,
मनवांछित फल पावत सेवत नर नारी (१०)
कंचन थार विराजे अगर कपूर की बाती,
श्री माल केतु में राजत कोटि रतन ज्योति (११)
दोहा श्री अम्बे जी की आरती, जो कोई नर गावे।

कहत शिवानन्द स्वामी, सुख सम्पति पावे॥

।। श्री मनसा पंचमूर्ति आरती।।

ॐ जय मनसा माता मैय्या जय मनसा माता।

तुमको निसिदिन ध्यावत हरि विष्णु धाता।। ॐ १।।

उमा रमा व्रह्माणी, तुम हो जग माता, मैय्या तुम हो जगमाता।

तुम हो सब जन त्राता, जो तुमको ध्याता।। ॐ २।।

तुम पाताल निवासिनी, पुष्कर हिमगिरि तब व्राता।

कर्म स्वभाव प्रकाशिनि, भवनिधि को त्राता।। ॐ ३।।

अष्टादश भुज धारिणी मैय्या औदिग्भुज धारिणी।

द्विदिग् (२०) चतुर भुज कारिणि जन्म मृत्यु त्राता।। ॐ ४।।

चण्डी रूप प्रशमनी, सुन्दर हो जगगौरी हो विख्याता।

पांचों रूप निरखता २ जग प्रपंच त्राता।। ॐ ५।।

अतिवाहन नव चण्डी दशविधि जगख्याता।

जो कोई तुमको ध्याता, सुख सम्पति पाता, मै०।। ६।।

जिस घर में तुम रहती वहां सब सद्गुण आता।

तुम बिन जग में कोई नहीं सुख सम्पत्ति पाता।। ॐ ७।।

उज्वलरूप निरखता सर्व सिद्धि पाता।

चौदह भुवनों में सब सम्भव उसको हो जाता।। ॐ ८।।

मां मनसा की आरती जो कोई नर गाता।

अन्त समय में शिवानन्द है वह सद्गति पाता।। ॐ ९।।

चांद लखीन्दर बहूला, पूर्वजन्म गाथा, जानी जानी कर गाता।

जो कोई नर यह गाता, धर्म अर्थ कामादिक, ज्ञान मुक्ति पाता।

आरती

आरती कीजै शम्भुसुता की, जगद्गौरी की।
नाग मातु की, आरती कीजै, श्री मनसा की॥१॥
कनकोज्वल रक्ताम्बर धारिणी, दुःखहारिणी की।
सुख कारिणी की, सर्पपवीतिनी, जन तारिणी की॥२॥
भुजाचारि शोभित अहित सुन्दर, चारुनागमणि, शिरधारिणी की।
शिवहृदि विपिन विहारिणी की, विषहरि श्री सिद्धेश्वरी की॥३॥
शैवी वैष्णवी माता की, जरुत्कारू प्रिया पद्मावती की।
जनमन भाविणी आस्तीक जी की, सब विधि इच्छा पूरिणि की॥४॥
नाग भगनि की, नाग जननि की, विश्व पूजिता मनोहरा की।
ज्ञानेश्वरि की अतिवाहन की, सिद्धिदात्रि सिद्धदायनी की॥५॥
नागवाहिनी सिद्धिरूप की, महाज्ञानि माननि की।
कस्यप पालित शिवकन्या की, जगद्गौरि जय जय मनसा की ॥६॥
धन्वन्तरि की इष्टदेवि की, अष्टनग तक्षक रक्षणि की।
शिवप्राणद की, छितिरूपा की तुष्टि-पुष्टि की जगधारिणि की॥७॥
क्षमादया की निन्द्रा तन्द्राधृतिरूपा की जय-३ श्री जय मनसा की।
सनातनाक्षुतरूप धारि की, जगजननी जगरूपा की॥८॥
इन्द्रसुपजित गरुड़स्तुता की, दिग्भुज द्विदिग्भुजा की दशपादा की
अष्टभुजा की, षड्रूपा की, महालक्ष्मी की,
लक्ष्मीरूपा श्री मनसा की॥९॥
विश्वरूपा की, सर्पराशि की, नवचण्डी की, नवदुर्गा की।
दशविद्या की, बहुला लक्ष्मीन्दर जननी जग श्री मनसा की।
चांदसार्थके मद मर्निनि की, सोना की, मंशापूरिणी की।
जय मनसा की॥१०

चण्डी देवी मन्दिर

यह मन्दिर गंगा पार नील पर्वत के ऊपर स्थित है जो कि दूर से दिखाई देता है। मन्दिर पर पक्के मार्ग तथा पगडंडी तथा रज्जूमार्ग के द्वारा जाया जा सकता है। अब से कुछ सालों पहले यहाँ केवल पगडंडी से ही तथा वह भी दिन के उजाले में पहुँचा जा सकता था। लेकिन वर्ष १९९७ से उड़न खटोला रोप वे की सुविधा भी यात्रियों के लिए प्रारम्भ कर दी गयी है। पहले इस जंगल में जंगली जानवरों का डर बना रहता था। सुना जाता है कि उन दिनों मन्दिर में प्रतिदिन रात को एक शेर आया करता था।

देवी भागवत में वर्णित नीलाम्बा देवी को कुछ विद्वान पण्डित जन इसी नील पर विराजमान चण्डी देवी ही मानते है।

आल्हा-ऊदल कथा जो कि समस्त उत्तर भारत के ग्रामीण अंचलों में पढ़ी और गायी जाती हैं, में वर्णित है कि वे लोग जब यहाँ आते थे तो चण्डी देवी की पूजा किया करते थे। आल्हा-ऊदल को इतिहासकार पृथ्वीराज चौहान के समकालीन मानते हैं, जिनका समय तेरहवीं शताब्दी उत्तरार्द्ध माना जाता है। चण्डी देवी मन्दिर का निर्माण सन् १८८६ ई० में जम्मू के राजा सुचेत सिंह द्वारा

करवाया गया। उसके बाद फिर जीर्णोद्वार इसी शताब्दी में श्रवणनाथ मठ के महन्त शांतानंद नाथ ने कराया।

यहाँ पर चैत्र मास की चतुर्दशी को मेला लगता है जिसमें हरिद्वार सहित आस-पास के गांवों के लोग भी काफी मात्र में आते हैं। वास्तव में असुरों का संहार करने वाली माँ चण्डी का यह मन्दिर एक सिद्ध पीठ है। जो माँ के दरबार में श्रद्धाभक्ति के साथ पवित्र मन से जाते हैं, उनकी मुरादे पूरी होती हैं। यहीं माँ की अमर कथा है।

जय माता की
मन्सा देवी महात्म
कथा इतिहास
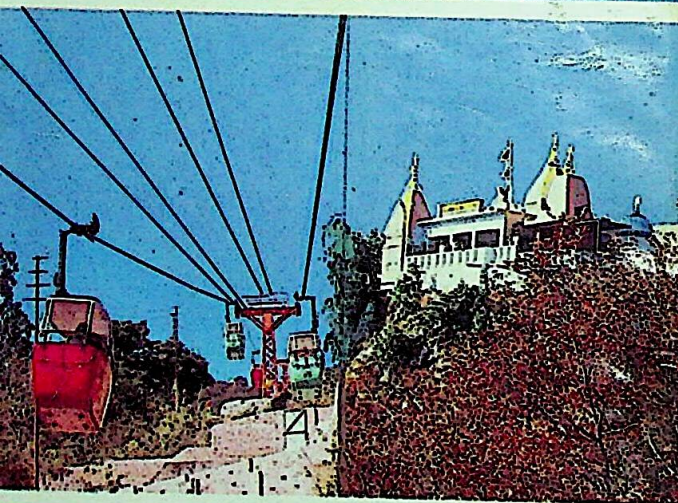
हर प्रकार की पुस्तकें मिलने का पता

कर्मसिंह अमर सिंह

पुस्तक विक्रेता—बड़ा बाजार—हरिद्वार -249401